卐 ॐ 卐

- सप्तम सत्र -

मानव संस्कृति का विराट स्वरूप

हमारा पृथ्वीलोक अपनी आकाशगंगा (विराट) का अंश है तथा हमारी पृथ्वी की हर घटना पर हमारी आकाशगंगा में स्थित तारों-सितारों का पूरा-पूरा नियंत्रण रहता है। अतएव मानव संस्कृति को पूर्णता से समझने हेतु विराट का दर्शन करना अर्थात् ब्रह्माण्ड में क्या कुछ हो रहा है इसकी समझ होना अत्यावश्यक है, तभी हम पूर्णता की समझ तक पहुँच सकते हैं। निम्न पंक्तियों में विज्ञान द्वारा आज तक की गयी खोजें तथा भारतीयों द्वारा पूर्वकाल में की गयी खोजों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

आधुनिक विज्ञान द्वारा सृष्टि का अध्ययन :- आज विज्ञान बड़े-बड़े अन्तरिक्ष यानों एवम् रेडियो दूरबीनों (Radio-telescopes) के माध्यम से सृष्टि के निर्माण एवम् उसके निर्माता की खोज में रात-दिन अथक प्रयास कर रहा है। पृथ्वी पर मानव है, तो विज्ञान सोचता है, कि ऐसी विकसित मानवता कहीं न कहीं अन्य ग्रह, नक्षत्र अथवा किसी दूसरी आकाशगंगा में भी होनी चाहिए।

निःसन्देह विज्ञान द्वारा किया जाने वाला उपरोक्त प्रयास प्रशंसनीय है। यदि यह मान भी लें, कि विज्ञान को इस प्रकार की उपलब्धि हो भी जाये, तो भी अनेक प्रश्नों के उत्तर अधूरे रह जायेंगे, जैसे - पृथ्वी पर रह रही मानवता को उससे क्या लाभ होगा ? क्या मानव अमर बन सकेगा? क्या मानव को देह धारण से उत्पन्न अनेक प्रकार के क्लेशों से मुक्ति मिल सकेगी? क्या उसका बारम्बार के जन्म-मरण से छुटकारा हो सकेगा ? क्या मानव को परम सुख एवम् परम शान्ति की प्राप्ति हो सकेगी ? अभी तक विज्ञान के ये सारे प्रयास अधिक से अधिक दैहिक सुखों के साधनों की प्राप्ति तक ही सीमित हैं। विज्ञान द्वारा मानव जीवन को अभी तक पूर्णता से न समझ सकने के कारण विविध क्लेशों और उनके समाधान तक उसका ध्यान गया ही नहीं है।

प्राचीन वैदिक काल में सारी खोजें समाधि प्राप्त वैज्ञानिकों द्वारा की गयी थीं। समाधि अवस्था में देश एवम् काल (Time and Space) का अन्तर समाप्त हो जाता है और तब मन की गति इतनी नियंत्रित हो जाती है, कि पृथ्वी पर मानव के दो घड़ी महाकाश में अनन्त प्रकाश वर्षों को नाप सकने में सक्षम हो उठते हैं। मानव मन की यह अद्भुत एवम् महान शक्ति अभी आधुनिक विज्ञान की सोच से दूर है। एक उदाहरण प्रस्तुत है।

रामचरितमानस में काकभुशुंडी जी ने श्रीराम जी के मुख में प्रवेश करने के पश्चात् ***अनेक ब्रह्माण्डों (आकाशगंगाओं) के दो घड़ी में ही दर्शन कर लिए थे*** और सर्वत्र मानव सृष्टि की रचना को भी देख लिया था, परन्तु परमात्मा राम को सर्वत्र एक जैसा ही पाया। निम्न पंक्तियों में यही बात कही गयी है -

दो.- *जो नहिं देखा नहिं सुना, जो मनहूँ न समाइ।*
सो सब अद्‌भुत देखेउँ, बरनि कवनि विधि जाइ[a] ।।
एक एक ब्रह्माण्ड महुँ, रहउँ बरष सत एक।
एहि विधि देखत फिरउँ मैं, अंड कटाह अनेक [b] ।।
भिन्न भिन्न मैं दीख सबु, अति विचित्र हरिजान।
अगनित भुवन फिरेउँ प्रभु, राम न देखेउँ आन [c] ।।

अर्थ :- काकभुशुंडि जी श्री गरुड़ जी को बतलाते हैं, कि जो बात कभी भी न देखी थी और न सुनी ही थी तथा जिस बात की मन कल्पना भी नहीं कर सकता, वही सब विचित्र बातों को मैंने (श्रीराम जी के मुख में प्रवेश कर चुकने के पश्चात्) देखा। उन सब अद्‌भुत दृश्यों का वर्णन करना कठिन है। प्रत्येक ब्रह्माण्ड में एक सौ वर्ष तक निवास किया और इस प्रकार हे गरुड़ जी ! मैं अनेक ब्रह्माण्डों में घूमता-फिरता रहा। मैंने अनेक ब्रह्माण्डों में सभी कुछ भिन्न-भिन्न देखा, परन्तु प्रभु श्रीराम जी को सर्वत्र एक जैसा ही देखा।

भारतीय ऋषियों के द्वारा अनेक महान खोजें की गयी हैं, उनमें ***'ध्यान साधना'***[d] सर्वोत्तम खोज है, अतः निम्न पंक्तियों में ध्यान साधना पर संक्षेप से चर्चा की जा रही है।

ध्यान साधना :- ध्यान साधना भारतीय वैज्ञानिकों की सर्वोच्च खोजों में से एक है। इसी तकनीक के सहारे उन्होंने बिना किसी यंत्र के वेद के अद्‌भुत ज्ञान भण्डार को खोजा और वह तकनीक विश्व के कल्याणार्थ हमें बतला भी गये हैं। यह विषय बहुत ही गम्भीर है तथा अनेक विद्वानों ने इस विषय पर अनेक ग्रंथ लिखे हैं। महर्षि पातञ्जलि[e] द्वारा लिखित सूत्रों के आधार पर इस निबन्ध में संक्षिप्त चर्चा की जा रही है।

ध्यान का अर्थ :- मानव अन्तःकरण चार अति सूक्ष्म शक्तियों से मिलकर बना है। इन शक्तियों के नाम हैं - *(a)* मन *(b)* बुद्धि *(c)* चित्त एवम् *(d)* अहंकार। यद्यपि अन्तःकरण की रचना तथा इसके क्रियाकलाप पर ***द्वितीय सत्र*** के चित्र संख्या-2.03 एवम् अनुच्छेद-1(d) के अन्तर्गत चर्चा की जा चुकी है, तथापि निम्न पंक्तियों में यथासम्भव स्पष्टता हेतु पुनः उल्लेख करने का प्रयास किया जा रहा है।

(*a*) मन :- मन कोई भौतिक संस्थान (System) नहीं है। सुषुम्ना पर स्थित मणिपुर चक्र पर 600 मील प्रति सेकंड की गति से घूर्णन करते एलेक्ट्रॉन के कारण अनन्त विचारों की उत्पत्ति होती रहती है। इन सतत् प्रवाहमान विचारों को ***'मन'*** की संज्ञा दी गयी है। जागृत अवस्था में यह प्रवाह निरन्तर गतिमान रहता है। स्वप्नावस्था में भी मन क्रियाशील रहता है। गहरी नींद की अवस्था में एलेक्ट्रॉन की गति ठहर जाने से विचारों का प्रवाह रुक जाता है, इसीलिए व्यक्ति जब प्रातःकाल गहरी (स्वप्न रहित) निद्रा से उठता है, तो स्वस्थचित्त और प्रसन्नता का अनुभव करता है। योग की भाषा में गहरी निद्रा को ***'सुषुप्ति'*** अवस्था कहा जाता

---

a, b, c *श्रीरामचरितमानस उत्तरकाण्ड के क्रमश दो. 80 (क), 80 (ख) एवम् 81 (क)*

d ध्यान द्वारा ईश्वर प्राप्ति होती है यह खोज गायत्री मंत्र में निहित है। पुस्तक के भाग-3 में "मानव धर्म का आधार-गायत्री मंत्र" नामक लेख संलग्न है।

e *'पातञ्जलि योग सूत्र'* में विस्तृत व्याख्या देखें।

है। विचारों के प्रवाह के थमने से नष्ट हो रही ऊर्जा का संचय होता है, अतएव व्यक्ति प्रातः अपने को तरोताज़ा अनुभव करता है।

मनुष्य की नाभि के पीछे सुषुम्ना पर मणिपुर नामक चक्र सतत् क्रियाशील रहता है। यह चक्र परमाणु (Atom) की रचना जैसा हो सकता है। इस चक्र पर गतिशील एलेक्ट्रॉन्स अपने परिक्रमा पथों में सतत परिवर्तन करते रहते हैं, परिणामस्वरूप मानव मन के मनोभावों में लगातार परिवर्तन होता रहता है। कुंडलिनी पर स्थित पूर्व जन्म के संस्कार तथा हमारी आकाशगंगा में स्थित ग्रह, नक्षत्र, राशियाँ एवम् चन्द्रमा सभी मिलकर मानव के अन्तःकरण पर संयुक्त रूप से प्रभाव डालते हैं। फलतः व्यक्ति कभी दयालु तो कभी क्रोधी और कभी कामी अथवा लोभी आदि नकारात्मक तथा सकारात्मक दोनों प्रकार के विचारों से अभिभूत रहता है। इस प्रकार व्यक्ति की ऊर्जा सतत् व्यय होती रहती है। मनोभावों का प्रभाव व्यक्ति के कार्यों पर पड़ता है तथा व्यक्ति के सारे कार्य उसके विचारों पर निर्भर करते हैं। विचारों और कार्यों के माध्यम से व्यक्ति निरन्तर बाह्य जगत से जुड़ा रहता है। वह कभी भी यह नहीं जान पाता, कि ***उसके अन्तर्जगत (अन्तःकरण) में कितनी महान शक्ति छिपी पड़ी है, जिसको जानकर और ध्यान योग के द्वारा वह बिना किसी यन्त्र के सृष्टि के सारे रहस्यों को जान सकता है तथा परमात्मा तक भी पहुँच सकता है।*** यदि मन की इस गति को कुछ समय के लिए भी रोक दिया जाये, तो महान आणविक शक्ति (Atomic Energy) का संचय होना आरम्भ हो जाता है। साधक में ***'ओज'*** तथा ***'तेज'*** की वृद्धि होने लगती है तथा उसका शान्त मन अपार शक्ति संचय करके साधक के चारों ओर एक शक्तिशाली चुम्बक क्षेत्र तैयार कर देता है। आठ प्रकार की ***'ऋद्धियाँ'*** तथा नौ प्रकार की ***'सिद्धियाँ'*** उसके कदम चूमती हैं। लाखों लोग जय-जयकार करने लगते हैं। जो वह बोलता है, लोग उसे ध्यान से सुनते हैं तथा जो वह करता है, जनता उसका अनुकरण करने लग जाती है अर्थात् वह समाज में मार्गदर्शक (गुरु) के रूप में पूजा जाने लगता है।

(*b*) **बुद्धि** :- दोनों भौहों तथा माथे के बीचों बीच ***आज्ञा चक्र*** स्थित है। इस चक्र पर चक्कर लगाता एलेक्ट्रॉन मणिपुर चक्र पर स्थित एलेक्ट्रॉन जैसा ही क्रियाशील होता है। अन्तर इतना है, कि इस चक्र पर स्थित एलेक्ट्रॉन की गति तब आरम्भ होती है जब मणिपुर वाले एलेक्ट्रॉन्स की गति धीमी हो जाती है। इस चक्र के एलेक्ट्रॉन मणिपुर वाले एलेक्ट्रॉन्स की अपेक्षा न्यूक्लियस (नाभि) के अधिक निकट स्थित होते हैं। ये एलेक्ट्रॉन्स नाभि के जितने पास आ जाते हैं, बुद्धि उतनी ही अधिक प्रखर तथा मेधावी होती है एवम् सही निर्णय ले पाती है।

(*c*) **चित्त** :- मूलाधार में स्थित कुंडलिनी के चित्र को देखने से यह समझ में आता है, कि आल्फा (तम) तरंगों पर पूर्व जन्म के संस्कार (प्रारब्ध) लिखे होते हैं, जिन्हें इस जन्म में भोगने हेतु जीवात्मा ने मानव जन्म धारण किया है। जीवन काल में बाह्य जगत् की प्रतिक्रिया स्वरूप अथवा मानव की सतत् चलने वाले चिन्तन व मनन द्वारा प्राप्त सम्वेदनाओं का रिकॉर्ड क्रोमोज़ोम्स पर जीन्स (सूचनाओं) के रूप में सतत् लिखा जाता है। यह कार्य पूरे शरीर में व्यापक रूप से जैव विद्युत (Bio-electricity) द्वारा पूरा किया जाता है। इस प्रकार दैनिक जीवन में किए जाने वाले कार्यों के कारण क्रोमोज़ोम्स पर लिखे जाने वाले जीन्स (सूचनाओं)

का समायोजन (Co-ordination) आल्फा कणों से निर्मित पश्चात् मस्तिष्क (POSTERIOR CEREBRUM) पर स्थित एक प्लेट द्वारा किया जाता है, जिसे ***'चित्त'*** कहते हैं। चित्त अन्तःकरण का एक अति शक्तिशाली अवयव (अंग) है। यह परमाणु की नाभि के समानान्तर रचना [a] जैसा होता है। गतिशील एलेक्ट्रॉन्स द्वारा नाभि के बाहरी कक्षा में घूमने से मन-बुद्धि में शक्ति का क्षय तथा थम जाने से शक्ति का संचय होता है। परन्तु एलेक्ट्रॉन्स के थमने के बाद ध्यान लग जाने पर एलेक्ट्रॉन्स नाभि के भीतर प्रवेश कर जाते हैं। इस स्थिति में उनमें नाभि (Nucleus) में स्थित अपार ऊर्जा का समावेश हो जाता है और जब वे एलेक्ट्रॉन्स ध्यानावस्था की समाप्ति के पश्चात् नाभि से बाहर आकर पुनः गतिशील होते हैं, तब नाभि से एलेक्ट्रॉन्स द्वारा लायी गयी बहुत सारी ऊर्जा (Magnetic force) से साधक के चारों ओर एक शक्तिशाली चुम्बक क्षेत्र तैयार होने लगता है, जिनके लाभ ऊपर गिनाए जा चुके हैं। जितने समय तक मन रुका रहता है अर्थात् विचारों का प्रवाह जब तक थमा रहता है, ऊर्जा संचित होती रहती है। मन के थमे रहने के मध्य बाह्य जगत से प्राप्त कोई भी सूचना ***अन्तःकरण (चित्त) में रिकॉर्ड नहीं हो पाती।*** मन द्वारा जितनी लम्बी समाधि लग जाये, उतना ही साधक ईश्वर के पास पहुँचता जाता है। ***पूर्व संस्कारों (प्रारब्ध) का भोग कर लेना तथा नवीन सूचनाओं (संस्कारों) का रिकार्ड न बन पाना, साधक को मोक्ष की ओर ले जाता है। ध्यान साधना की यह सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है।*** ऋद्धि-सिद्धियों के लाभों में फँस कर साधक ईश्वर (मोक्ष) प्राप्ति से विमुख हो जाता है।

(d) अहंकार :- परमाणु की रचना जैसी ही सुषुम्ना पर स्थित मूलाधार चक्र से लेकर सहस्रार तक के इन चक्रों की परिकल्पना है। परमाणु की नाभि के भीतर प्रोटॉन्स तथा न्यूट्रॉन्स स्थित रहते हैं। उन्हीं को विराट में चित्त=विष्णु धन (+) चार्ज एवम् अहंकार=शिव सम (±) चार्ज के नामों से पञ्चम सत्र में विस्तार से स्पष्ट किया गया है। सहस्रों नस-नाड़ियों से निर्मित मानव मस्तिष्क को ***सहस्रार*** अथवा Cortex भी कहते हैं। इस सहस्रार (Cortex) में लगभग 40,000 अथवा इससे भी अधिक गति वाले विद्युत स्पन्दन प्रति सेकंड के होते रहते हैं। लगता है कि यह भाग न्यूट्रॉन कणों का विशेष संग्रह स्थान है तथा परमाणु रचना जैसा व्यवहार इस क्षेत्र में भी देखने में आता है। यह सहस्रार चक्र जीवात्मा को विराट पुरुष (ब्रह्म) से जोड़ने अथवा अलग बनाए रखने की परत है, जिसको उपरोक्त ध्यान साधना द्वारा ध्वस्त किया जा सकता है। *(उपरोक्त अनुच्छेद (a) से (d) तक का कथन लेखक की अपनी परिकल्पना है)*

ध्यान साधना हेतु पूर्वाभ्यास :- 'पातञ्जलि योग' सूत्र के अनुसार समाधि स्थिति को प्राप्त करने हेतु निम्न आठ क्रमिक सोपान हैं - *1.* यम *2.* नियम *3.* आसन *4.* प्राणायाम *5.* प्रत्याहार *6.* धारणा *7.* ध्यान एवं *8.* समाधि। इन सोपानों का खुलासा यथासाध्य निम्न पंक्तियों में किया जा रहा है।

1. यम :- यम का अर्थ है - आवश्यक कर्म। यम पाँच हैं। इनका पालन करने से बाह्य शुद्धि होती है। आचरण शुद्धि से मन की शुद्धि होती है।

***(i)* सत्य :-** सदैव सत्य बोलें। इन्द्रियों द्वारा जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया गया

---

a इस विषय पर **द्वितीय सत्र** के अनुच्छेद-*1d* एवं *3(c)* के अन्तर्गत चर्चा की जा चुकी है।

हो, वही बोलें अन्यथा नहीं। मन, वाणी एवम् कर्म से सत्य का आचरण करें, नहीं तो प्राण का क्षरण होता है और ध्यान साधना में सफलता नहीं मिलती।

***(ii)* अस्तेय :-** कोई भी कार्य छिप कर करने से मन भयभीत रहने लगता है इससे 'प्राण-शक्ति' का क्षय होता है। इसलिए पारदर्शी जीवन जिएं। चोरी, छल, कपट, झूठ से सदैव बच कर रहें।

***(iii)* अहिंसा :-** मन, वाणी एवम् कर्म से किसी प्रकार से भी किसी की हिंसा न करे अर्थात् कष्ट न दें। हिंसा से प्रतिहिंसा को बढ़ावा मिलता है, जो ध्यान साधना में बाधक है।

***(iv)* ब्रह्मचर्य[a] :- 'प्राण-शक्ति'** का सबसे अधिक क्षय ब्रह्मचर्य के पालन न करने से होता है। आठ प्रकार के मैथुनों से वीर्य का स्खलन तथा मानव शरीर से **'प्राण-शक्ति'** (चुम्बकीय विद्युत तरंगों) का क्षरण होता है। इनसे अपने आप को बचाएं। ध्यान की सफलता में ब्रह्मचर्य का विशेष महत्त्व है।

***(v)* अपरिग्रह :-** जीवन की आवश्यकता से अधिक सामग्री को परिग्रह (एकत्र) करने से और अधिक की चाह बनी रहती है। इस प्रकार मन का एकाग्र होना कठिन हो जाता है। अतएव जीवन की आवश्यकताएं सामान्य, सात्विक तथा कम से कम निर्धारित करनी चाहिए।

2. नियम :- नियम का अर्थ है - विधान अथवा कर्त्तव्य कर्म। नियम के भी पाँच ही प्रकार हैं। नियमों का पालन करने से अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त एवम् अहंकार) की शुद्धि होती है।

(i) शौच :- शौच का अर्थ है भीतर और बाहर दोनों प्रकार से पवित्र जीवन जीना। न्यायपूर्वक अर्जित किया गया धन, वस्त्र, मकान एवम् सात्विक भोजन तथा सबसे मैत्री भावना रखने से शारीरिक, मानसिक एवम् बौद्धिक शुद्धि होती है। राग-द्वेष आदि भावों से दूर रहना भी शौच के अन्तर्गत है। इस प्रकार के आचरण से मन प्रसन्न रहता है तथा प्राण का स्तर ऊँचा रहता है।

(ii) संतोष :- प्रारब्धवश जो प्राप्त हो जाये, उसी में संतोष पूर्वक जीवन यापन करना, वासनाओं पर अंकुश रखना, तृष्णा से बचना, दूसरों की सम्पदा देखकर ईर्ष्या न करना आदि, संतोष भाव कहलाता है। संतोषी व्यक्ति को शान्ति सुलभ रहती है।

(iii) तप :- धर्म (कर्त्तव्य) जैसे व्रत, उपवास, नियम, संयम का पालन करते हुए जो कष्ट आ पड़े, उसे सहर्ष सहन करना तप कहलाता है। अर्थात् नियमपूर्वक जीवन जीने का नाम तप है। तप से साधना में दृढ़ता आती है।

(iv) स्वाध्याय :- नियम पूर्वक धर्म-शास्त्रों का अध्ययन करते रहने से मानव अपने कर्त्तव्य पथ पर दृढ़ता से चलता रहता है। स्वाध्याय द्वारा साधक को ऐसी प्रेरणा मिलती है, जिससे उसे सही दिशा का ज्ञान रहता है। उसे कर्मफल तथा पुनर्जन्मों के कष्टों का ज्ञान होते रहने से वह वैराग्य पथ पर बिना लड़खड़ाए चलता रहता है।

(v) ईश्वर प्रणिधान :- ईश्वर प्रणिधान का अर्थ है पूर्ण रूप से ईश्वर की शरण में हो जाना। सभी साधनाओं का आचरण करते हुए ईश्वर की सर्वव्यापकता का चिन्तन करते रहना

---

a इस पर विस्तृत जानकारी **चतुर्थ सत्र** में 'ब्रह्मचर्य व्रत' शीर्षक के अन्तर्गत दी गयी है।

तथा ईश्वर ही सब कुछ करने-कराने वाला है, ऐसा भाव सदैव बनाए रखने से साधक अहंकार से बचा रहता है और उसकी समाधि की ओर प्रगति बिना विघ्न के हो जाती है।

3. आसन :- ध्यान करने हेतु ऐसे आसन अर्थात् बैठने के सुखदायक ढंग का साधक को चुनाव करना चाहिए, जिससे शरीर के किसी अंग को कष्ट भी न हो एवं रीढ़ की हड्डी व गर्दन सीधी बनी रहे, ताकि **'प्राण-प्रवाह'** निर्बाध गति से चलता रहे तथा साधक को निद्रा भी न आ जाए। अनेक पशु-पक्षियों के व्यवहार का अध्ययन करके ऋषियों ने बहुत से आसनों का विकास किया है। वे सब आसन हठयोग के अंग हैं, फिर भी उनमें से कुछ खास आसनों को चुनकर नित्य प्रति अपनी सामर्थ्य के अनुसार करना कर्त्तव्य है। इन आसनों का मूल उद्देश्य है, कि साधक की **'प्राण-शक्ति'** सतेज रहे तथा यथासम्भव शरीर पुष्ट एवम् निरोग बना रहे, ताकि साधना सुचारु रूप से चलती रहे।

4. प्राणायाम :- इस विधि में गहरी एवं नियंत्रित श्वॉस-प्रश्वॉस क्रिया द्वारा शरीर में आक्सीजन तथा ब्रह्माण्डीय ऊर्जा के आवेशित कणों[a] (चित्र संख्या-1.02, पृष्ठ-3) का सुचारु रूप से संचरण होता है, जिससे शरीर निरोग एवं तेज, बल व बुद्धि के विकास के साथ-साथ मन के अमन बनने एवं ध्यान लगाने में सहायता मिलती है। इस सम्बन्ध में कुछ प्राणायाम विधियाँ नीचे दी जा रही हैं।

(*a*) **भस्त्रिका :-** लुहार की धौंकनी की तरह दोनों नथुनों से वायु को अन्दर खींचें और जल्दी-जल्दी बाहर फेंकें। इस क्रिया की संख्या ग्यारह से शुरू करके कुछ दिनों में यथाशक्ति बढ़ा लें।

(*b*) **कपाल भाति :-** दोनों नथुनों से एक साथ श्वॉस खींचें और बाहर फेंकते समय पेट को अन्दर खींचें और छोड़ें। इस क्रिया को यथाशक्ति जल्दी-जल्दी करें।

(*c*) **अनुलोम-विलोम एवं भ्रामरी :-** सर्वप्रथम दायें नथुने को बंद करें तथा बायें नथुने से धीरे-धीरे गहरा श्वॉस खीचें। फिर बायें नथुने को बंद करें और दायें नथुने से धीरे-धीरे श्वॉस को बाहर छोड़ें। अब बायें नथुने को बंद रखते हुए दायें से गहरा श्वॉस भरें और फिर दायें नथुने को बंद करके धीरे-धीरे श्वॉस को बायें नथुने से छोड़ें। इस अनुलोम-विलोम क्रिया को यथाशक्ति करें। भ्रामरी प्राणायाम भी ध्यान साधना के लिए श्रेष्ठ है। सभी क्रियाओं को योग की पुस्तकों अथवा किसी योग के आचार्य से सूक्ष्मता से सीखें।

5. प्रत्याहार :- प्रत्याहार का अर्थ है प्रति (विपरीत) आहार। मानव मन की प्रकृति है विषयों की ओर भागना, विषयों का चिन्तन करना अर्थात् मन का आहार (भोजन) संसार के विषय हैं। मन को विषयों से विरत करना प्रत्याहार साधना का उद्देश्य है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु श्रीमद्भगवद् गीता में यह मार्गदर्शन दिया गया है, कि साधक को अपने मन को बारम्बार यह समझाना चाहिए, कि विषयों के भोगने से कभी भी तृप्ति नहीं होती तथा विषयों में आनन्द लेने से भोगने की इच्छा बढ़ती ही जाती है, परिणामतः रोगी शरीर, वृद्धावस्था के क्लेश एवम्

---

a आवेशित कणों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी हेतु पृष्ठ 3-4 पर दिए गये Foot Note 'b' का अवलोकन करें।

जन्म-मरण के कष्टों को भोगना [a] पड़ता है। इस प्रकार से बारम्बार स्मृति कराते रहने से मन को विपरीत आहार मिलेगा, तब वह धीरे-धीरे वश में हो जायेगा तथा अपने इष्ट के चिन्तन में लगने लगेगा। इस प्रकार मानव, साधना की ओर अगला कदम बढ़ा सकेगा।

उपरोक्त पाँच सोपान योग के बाह्य अंग हैं। निम्न तीन अन्तरंग सोपान हैं।

6. धारणा :- मन को एक दिशा में चलाना (प्रेरित करना) धारणा (Concentration) है। यह एक दिशा में चलाने की क्रिया कई प्रकार से सम्पन्न की जा सकती है। कुछ विशिष्ट प्रयोग नीचे दिए जा रहे हैं -

(*a*) भौतिक उपादान :- इष्ट देव, जैसे - शिवलिंग, राम, कृष्ण, हनुमान, देवी, गणेश आदि की मूर्ति, दीपक की ज्योति, प्रातःकालीन सूर्य, ध्रुव तारा, चन्द्रमा अथवा कोई भी प्राकृतिक सुन्दर दृश्य आदि भौतिक अवलम्बनों में से किसी एक को अपलक निहारते रहना तथा मन से भी उसका चिन्तन सतत् बनाए रखने का अभ्यास करने से मन का स्तम्भन एक बिन्दु पर होने लगता है।

भौतिक उपादानों के पश्चात् सूक्ष्म उपादानों का अभ्यास, धारणा के अभ्यास का दूसरा सोपान है।

(*b*) सूक्ष्म उपादान :- प्रकाश को अंतर प्रदेश में, भृकुटि के भीतर, कण्ठ में, नाभि पर, हृदय में अनुभव करना तथा इस विचार को निरन्तर बनाए रखना अथवा श्वॉस-प्रश्वॉस पर ध्यान एकाग्र करना, सूक्ष्म ध्यान के अन्तर्गत है।

इष्ट मंत्र का जप करना, जैसे - हरि ॐ, श्री रामाय नमः, श्री कृष्णाय नमः, ॐ नमः शिवाय, इत्यादि के साथ ही इष्टदेव के चित्र अथवा मूर्ति का अपने अन्तर प्रदेश में चिन्तन करना, धारणा की सम्पूर्ण प्रक्रिया है।

'अहम्-ब्रह्मास्मि', 'अयम्-आत्मा ब्रह्म', 'सोऽहम्', 'तत्वमसि', 'शिवोऽहम्' आदि मन्त्रों का जप तथा इनके अर्थों का सतत् चिन्तन का अभ्यास, धारणा के अन्तर्गत ही आता है।

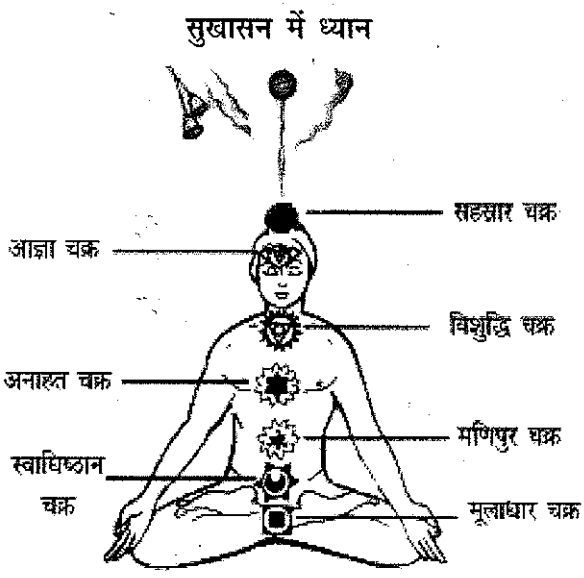

चित्र : 7.01

7. ध्यान :- उपरोक्त धारणा का अभ्यास करते हुए मन की वृत्ति अर्थात् विचारों का प्रवाह थमने लग जाता

---

a **इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च। जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्।।** *(गीता-13/8)*
अर्थ :- श्रीकृष्ण भगवान् बोले, हे अर्जुन ! इस लोक और परलोक के सम्पूर्ण भोगों में आसक्ति का अभाव और अहंकार का भी अभाव एवं जन्म, मृत्यु, जरा और रोग आदि में दुःख-दोषों का बारम्बार विचार करना।

है। इस स्थिति में मन का संकल्प-विकल्प करने का कार्य स्तम्भित होने लगता है। शुरू में विचारों का प्रवाह का क्षण भर के लिए रुकना ही ध्यान की शुरुआत है। इस प्रकार मन के रुक जाने की क्षमता के समय को बढ़ाते रहने के दृढ़ संकल्प के साथ प्रयास करते रहना चाहिए। मन का एक दिशा में बहते रहना अथवा चलते रहना ध्यान (Meditation) है। मन को किसी एक दिशा में चलाने के अभ्यास को धारणा (Concentration) कहा जाता है।

8. समाधि :- ***जब ध्यान स्थिर होकर इष्ट का स्वरूप भी शून्य हो जाये अर्थात् विचार शून्यता की स्थिति पैदा होकर मन और बुद्धि चित्त में विलीन हो जाये, इसे समाधि कहते हैं।*** ऐसी स्थिति में एलेक्ट्रॉन्स का नाभि (Nucleus) में प्रवेश हो जाता है तथा उनके नाभि में ही ठहर जाने की स्थिति को समाधि कहा गया लगता है। समाधि की स्थिति से पूर्व भी जब साधक की कुछ क्षणों के लिए ही सही, मन की गति थमने लगती है, तो एक विशिष्ट प्रकार की शान्ति तथा अद्‌भुत आनन्द की अनुभूति होने लगती है। इस आनन्द की अनुभूति को अभ्यास द्वारा जितना दृढ़ किया जायेगा, मन संसार से उतना ही विरत होता जायेगा और साधक की प्रगति उच्च से उच्चतर सोपानों की ओर होती जायेगी। ***अन्त में अखण्ड आनन्द (परमानन्द) सतत् स्थायी आनन्द (सत+चित+आनन्द) की अनुभूति ही परमात्मा की प्राप्ति कहा गया है, क्योंकि आत्मा का अथवा परमात्मा का स्थायी निवास आनन्द का कोष ही तो है।*** समाधि के दृढ़ अभ्यास के द्वारा साधक लगातार कई घंटों तथा कई दिनों तक इसी स्थिति में रहते हुए अपार ज्ञान एवम् अपार ऊर्जा का संचय करके कैवल्य (मोक्ष) पद की प्राप्ति कर लेता है अर्थात् साधक तब आवागमन के चक्र से मुक्त हो जाता है। इस प्रकार की समाधि को निर्बीज समाधि कहा जाता है अर्थात् तब अवचेतन मन पूर्ण रूप से विचारों (संस्कारों) से रिक्त हो जाता है। जब साधक के अवचेतन मन में संसार के हितार्थ कोई विचार शेष रह जाता है तब साधक समाधि से वापिस संसार में पुनः क्रियाशील होने लगता है और जीवों के कल्याण के लिए ही जीवन जीता है, इसे ***'सबीज-समाधि'*** कहा जाता है। समाधि शब्द का एक अर्थ यह भी है, कि व्यक्ति की बुद्धि ऐसी ***'सम-अवस्था'*** को प्राप्त कर लेती है, कि साधक सुख-दुःख, मान-अपमान एवम् हानि तथा लाभ के भाव से ऊपर उठ जाता है। वह बाह्य जगत से आने वाली अनुकूल तथा प्रतिकूल सम्वेदनाओं को ग्रहण नहीं करता अर्थात् वह शिव (शव+इव) का रूप हो जाता है तथा इस प्रकार वह पूर्व जन्म के प्रारब्ध के भोग की समाप्ति होते ही मोक्ष (कैवल्य) की प्राप्ति स्वतः कर लेता है। *(विस्तृत लाभों की जानकारी हेतु पातञ्जलि योग सूत्र पठनीय है)*

9. समाधि द्वारा सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्ति का वैज्ञानिक विश्लेषण :- भारतीय शास्त्रों का कथन है, कि ***समाधि की सिद्धि से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ साधक को प्राप्त हो जाती हैं।*** साधक ऐसे अनेक कार्य कर सकता है, जो साधारण व्यक्ति नहीं कर पाता; जैसे - दूसरे के मन की बात जान लेना, पशु-पक्षियों की बोली समझ लेना, अन्तर्ध्यान हो जाना, शरीर को अति सूक्ष्म अथवा अति भारी बना लेना, इच्छा मात्र करने से संसार की किसी भी दुर्लभ वस्तु को प्राप्त कर लेना, पूर्व जन्मों के सम्बन्ध में जान लेना आदि।

मन (एलेक्ट्रॉन) का घूर्णन (Revolution) थम जाने के पश्चात् वह भीतरी कक्षा में प्रवेश करने लग जाता है, तब वह बुद्धि (निर्णय) की अनुकूल स्थिति में होता है और इससे आगे वह

नाभि में प्रवेश कर जाने पर एक करोड़ वोल्ट[a] की ऊर्जा से संयुक्त हो जाता है, क्योंकि हर परमाणु की नाभि में इतनी ऊर्जा होने का आकलन किया गया है। इस स्थान पर पहुँच कर मानव मन (एलेक्ट्रॉन) मानव चित्त (Proton) के सम्पर्क में आता है जहाँ पर मानव की अनन्त-अनन्त जन्मों की स्मृतियाँ लिखी होती हैं, इस प्रकार इच्छा मात्र से पूर्व जन्मों की स्मृतियाँ मानव मन के पटल पर साफ दिखायी देने लगती हैं। क्योंकि पूरे विश्व के महाकाश में हर प्रकार की जानकारी (Information) उपलब्ध है, अतएव जिस क्षेत्र की जानकारी के लिए मन को प्रेरित किया जाता है, वह उसी क्षेत्र की जानकारी खोज कर चित्तपटल पर प्रकाशित कर देता है। यह सब उसी प्रकार से होता है, जैसे कि नासा (NASA) की वेबसाइट (Website) से ताज़ा खोज की जानकारी लेनी हो तो कम्प्यूटर को आदेश (Command) दिया जाता है और तब कर्सर (मन) उसमें पूरे विश्व से जुड़े इन्टरनेट (Internet) द्वारा प्राप्त जानकारी को खोज लाता है तथा कम्प्यूटर के पटल (Screen) पर साफ-साफ प्रदर्शित कर देता है। इसी प्रकार भारतीय वैज्ञानिकों ने सृष्टि के सृजन, पालन एवम् विनाश सम्बन्धी तथा ग्रहों, राशियों, नक्षत्रों द्वारा उत्पन्न मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का आकलन कर लिया था। भृगुसंहिता ज्योतिष शास्त्र का अनुपम ग्रंथ है, जिसमें आने वाली कई पीढ़ियों का भविष्यफल लिख दिया गया है।

आधुनिक विज्ञान और सूक्ष्म जगत :- आधुनिक विज्ञान द्वारा सूक्ष्म जगत की कुछ सीमा तक खोज की गयी है, जैसे - अणु-परमाणुओं और कणों के अद्‌भुत संसार को उसने पहचाना है और उनका नामकरण भी किया है। उदाहरण के लिए किसी भी पदार्थ के अणु (Molecule), जैसे - जल के अणु को खण्डित किया और जाना, कि जल का एक अणु दो हाइड्रोजन (H_2) परमाणुओं (Atoms) और एक ऑक्सीजन (O) के परमाणु से मिलकर बना है। तत्पश्चात् हाइड्रोजन एवम् ऑक्सीजन जैसे अनेक अर्थात् कार्बन, नाइट्रोजन, लोहा, सोना, चाँदी, यूरेनियम, आदि परमाणुओं का भेदन करके उनमें निहित कणों (Particles) अर्थात् एलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन एवम् न्यूट्रोनों की संख्या को चिह्नित किया और फिर सभी तत्वों (Elements) को सूचीबद्ध करके एक बड़ी-सी सूची, जिसे Long form of Periodic Table[b] के नाम से जाना गया, बना दी। ऐसी एक संक्षिप्त सूची की चौथे सत्र में चर्चा की जा चुकी है तथा पूरी बड़ी सूची में आज तक के सभी ज्ञात तत्त्वों में कितने-कितने एलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन एवम् न्यूट्रॉन कण हैं, के विचित्र संसार को उजागर किया गया है। इन तीन कणों के अतिरिक्त फोटॉन एवम् न्यूट्रीनों दो कण और हैं। ये पाँचों कण तथा इनके पाँच प्रतिकण सृष्टि की पूरी अवधि तक स्थायी रहते हैं। इन दस कणों एवम् प्रतिकणों के पश्चात् अनेक कण और हैं, जिनकी ज्ञात संख्या अब तक लगभग दो सौ से ऊपर है, उनमें से अधिकतर अस्थिर कण हैं। कुछ अपेक्षाकृत स्थिर कणों का नामकरण किया गया है। उनकी नामकरण सहित एक तालिका आगामी पृष्ठ पर *Tao of Physics*[c] पुस्तक से उद्‌धृत की जा रही है।

सृष्टि काल तक स्थायी रहने वाले पाँच कणों तथा उनके प्रतिकणों के अतिरिक्त इस तालिका में दर्शाए गये आठ अपेक्षाकृत स्थिर कण और हैं। इन कणों में से कुछ कणों में

---

a *Page-253 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo*

b Long form of Periodic Table **चतुर्थ सत्र** के चित्र संख्या-4.08 पर है।

c *Page-252 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo*

सृष्टि काल तक स्थायी रहने वाले एवम् अपेक्षाकृत स्थिर कणों की तालिका

नाम			स्थायित्व काल	प्रतीक	
				कण	प्रतिकण
फोटॉन			सृष्टि काल	γ	
लेप्टॉन्स		न्यूट्रीनो	सृष्टि काल	ν_e ν_μ	$\bar{\nu}_e$ $\bar{\nu}_\mu$
		एलेक्ट्रॉन	सृष्टि काल	e^-	e^+
		मूयॉन	-	μ^-	μ^+
हैड्रॉन्स	मीसॉन्स	पीयॉन	-	π^+ π^0	π^-
		केयॉन	-	K^+ K^0	$\bar{K}^0$ K^-
		ईटा	-	η	
	बैरीयॉन्स	प्रोटॉन	सृष्टि काल	p	$\bar{p}$
		न्यूट्रॉन	नाभि के भीतर सृष्टिकाल तक	n	$\bar{n}$
		लैम्बडा	-	Λ	$\bar{\Lambda}$
		सिगमा	-	Σ^+ Σ^0 Σ^-	$\bar{\Sigma}^+$ $\bar{\Sigma}^0$ $\bar{\Sigma}^-$
		कासकेड	-	Ξ^0 Ξ^-	$\bar{\Xi}^0$ $\bar{\Xi}^-$
		ओमेगा	-	Ω	$\bar{\Omega}^-$

सम (±) आवेश है, कुछ धन (+) विद्युत से और कुछ ऋण (-) विद्युत से आवेशित हैं। इस तालिका में कणों (Particles) के साथ उनके प्रतिकणों (Anti-Particles) को भी दर्शाया गया है, जिन्हें भारतीय ग्रंथों में प्रतीकों की भाषा में उनकी पत्नियों के वाहक के रूप में चिह्नित किया गया है। Anti-Particles का भाव विपरीत से न होकर पूरकता (Complementarity) का है। जो आठ अपेक्षाकृत स्थिर कण (मूयॉन, पीयॉन, केयॉन, ईटा, लैम्बडा, सिगमा, कासकेड और ओमेगा) अब तक मिले हैं, ऐसा लगता है, कि पौराणिकों ने भी प्रतीकों की भाषा में इन्हीं सूक्ष्म जगत के कणों के नाम किन्नर, गंधर्व, यक्ष एवम् रजनीचर आदि रखे थे। भागवत् पुराण[a] के अनुसार देव सृष्टि आठ प्रकार की है। इनके नाम हैं - ***देवता-पितर, असुर, गन्धर्व-अप्सरा, यक्ष-राक्षस, सिद्ध, चारण-विद्याधर, भूत-प्रेत-पिशाच और किन्नर-किम्पुरुष-अश्वमुख।*** कदाचित् बिना आवेश वाले नाचने वाले कण किन्नर हों, गन्धर्व, वे कण हों, जो निरन्तर ध्वनि[b] उत्पन्न करते हुए गायन कर रहे हों, कुछ कणों के प्रतिकण (Anti-Particle) भी हो सकते हैं, जो अप्सराओं के रूप में 'इन्द्र देव' के दरबार में निरन्तर अपने सौन्दर्य को बिखेरते हुए नृत्य करते हो। एलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु

---

a *श्रीमद् भागवत महापुराण, प्रथम खण्ड, पृष्ठ 245, पन्द्रहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0सं0 2047*

b All the other particles known so far belong to a category called 'resonances'.....
(Page-251 Tao of Physics, 3rd Edition. Publishers M/s. Flamingo)

एवम् शिव बलों के वाहक कण हैं। तथा अति चञ्चल फोटॉन (तड़ित विद्युत) इन्द्रबल के वाहक हों। न्यूट्रीनों कण *'रुद्र'* अर्थात् विनाशक शक्ति, देव कणों पर सदैव आक्रमण करते हुए विष्णुपक्ष वाली दैवी शक्तियों के विनाश में लगे रहते हों। विष्णुपक्ष वाली शक्तियों का अर्थ है, जो सृष्टि का सृजन एवम् पालन करने का कार्य करती हैं। यक्ष कण भी देव कणों के अन्तर्गत माने गये हैं। 'कुबेर' को देवताओं के खजांची का पद दिया गया है और वे यक्ष श्रेणी के देवता हैं। कथा है, कि 'रावण' ने यक्षों को हराकर लंका पर कब्ज़ा कर लिया था और उसे अपनी राजधानी बना लिया था। उसी राजधानी से वह इन्द्रादिक देवताओं पर चढ़ाई करता था और उन्हें परास्त भी करता था। 'रावण' ने 'कुबेर' से पुष्पक विमान भी छीन लिया था। न्यूट्रीनों कण, चूँकि न्यूट्रॉन कण के विघटन से उत्पन्न होते हैं, अतएव इन कणों को सदा से भगवान 'शंकर' का वरदान प्राप्त है, कि वे सृष्टि के संहार का कार्य करते रहें। क्योंकि न्यूट्रॉन कण का औसत जीवनकाल 1000 सेकंड का होता है, अतएव साहित्यिक भाषा में कहा गया, कि भगवान 'शंकर' शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं, जबकि प्रोटॉन कण का विनाश एक कल्प में होता है। न्यूट्रॉन कण का विघटन निम्न प्रकार से होता है[a] :-

$$n \longrightarrow p^{+} + e^{-} + \bar{\upsilon}$$

न्यूट्रॉन → प्रोटॉन + एलेक्ट्रॉन + एन्टी न्यूट्रीनो

एलेक्ट्रॉन, न्यूक्लियस के चारों ओर लगातार गति करता रहता है। उसकी गति में अवरोध दो क्षण का तब होता है, जब वह अपने परिक्रमा पथ में परिवर्तन करता है। इसी के समानान्तर आकाशगंगा (विराट) के बाहरी घेरों में स्थित लगभग एक खरब सूर्य निरन्तर आकाशगंगा के केन्द्र की परिक्रमा कर रहे हैं। इस गति (Motion) को 'ब्रह्मा' के मानस पुत्र 'नारद' के नाम से कहा गया लगता है। यह गति इतनी तीव्र और लयपूर्ण होती है, *कि उससे निरन्तर 'नारायण' शब्द का नाद होता रहता है, अतएव 'नारद' अपने हाथ में 'वीणा' लिए हुए निरन्तर नारायण-नारायण का कीर्तन करते बतलाए गये हैं। 'ब्रह्मा' के चार मानस पुत्र और हैं, जिनके नाम - सनक, सनन्दन, सनतकुमार और सनातन हैं। ये एलेक्ट्रॉन के परिक्रमा पथ के चार शीर्ष बिन्दुओं को कहा गया लगता है। 'ब्रह्मा' के कुछ और भी मानस पुत्र बतलाए गये हैं। 'दक्ष' प्रजापति द्वारा सृष्टि निर्माण का कार्य करवाए जाने का विवरण भी मिलता है।* दक्ष[b] को ब्रह्माजी की बुद्धि का मानवीकृत प्रतीक माना जा सकता है।

परमाणु संरचना

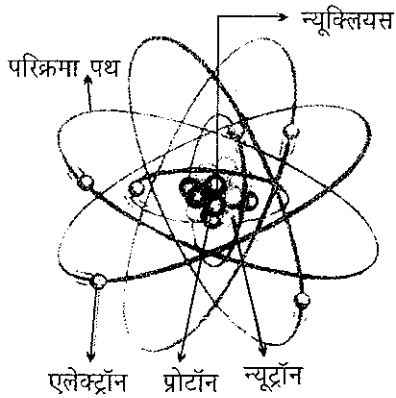

चित्र : 7.02

---

a *Page-250 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo*

b ब्रह्माजी के मानस पुत्रों पर विस्तृत जानकारी **पञ्चम सत्र** में दी जा चुकी है।

उपरोक्त चर्चा करने का भाव यह है, कि आधुनिक विज्ञान द्वारा की गयी खोजें भारतीय ग्रंथों में पहले से ही मौजूद हैं तथा उसे अभी और भी बहुत कुछ खोजना शेष है। अगली पंक्तियों में भारतीय ग्रंथों में उपलब्ध कुछ और जानकारी दी जा रही है, जिससे यह बात अधिक स्पष्ट हो जायेगी। इन खोजों को उन्होंने सुन्दर एवम् सुरुचिपूर्ण प्रतीकों की भाषा में लिपिबद्ध किया है, ताकि साधारण से साधारण व्यक्ति भी उसे समझ ले। आज उन सब प्रतीकों का खुलासा करने की महती आवश्यकता है।

भारतीयों द्वारा प्रतीकात्मक लेखन :- शिव पुराण में कहा गया है, कि *महेश्वर अपने मस्तक पर आकाशगंगा* [a] *(गंगा नदी को नहीं) को धारण करते हैं। पृथ्वीवासी साधकों के लिए 'शंकर जी' के सिर पर गंगा नदी को धारण करते दिखलाया गया है, क्योंकि गंगा नदी आकाशगंगा का प्रतीक है। न्यूट्रॉन तारों से निर्मित आकाशगंगा का एक लाख प्रकाश वर्ष लम्बा जो स्तम्भ है, वह अव्यक्त महेश्वर का प्रकट भौतिक रूप है। मन्दिरों में स्थापित 'शिवलिंग' इस विशालकाय स्तम्भ का प्रतीक है। प्रोटॉन एवम् एलेक्ट्रॉन तारों से निर्मित 'बैकुण्ठ लोक' और 'ब्रह्म लोक' को यह न्यूट्रॉन तारों का स्तम्भ पूरी तरह से धारण करता है। इस स्तम्भ का वज़न, कुल आकाशगंगा के वज़न का 2/3 है।* इस स्तम्भ को शिवपुराण में ही 'शिव लोक' अथवा 'काशी' एवम् आनन्दवन तथा अविमुक्त क्षेत्र के नामों से बतलाया गया है। इसे परम निर्वाण या 'मोक्ष'[b] स्थान भी कहा गया है। *जब जीवात्मा के मोह का पूरी तरह से क्षय हो जाता है, तब वह इस लोक में आकर, इस स्तम्भ में विलीन हो जाती है।*

तीर्थों की स्थापना क्रम में इसी 'काशी' (मोक्ष स्थान) को भारत के वाराणसी नगर में, प्रतीक रूप में रूपान्तरित करके **'शिवजी'** का वास स्थान मोक्षदायी तीर्थ के रूप में स्थापित किया गया लगता है। ऐसे ही 'बैकुण्ठ' और 'ब्रह्म लोक' के संधि स्थान पर कहीं पर ऐसा ऊर्जा क्षेत्र है, जहाँ पर कोई युद्ध नहीं होता अर्थात् *उस स्थान पर असुरों (रावण आदि) की पहुँच नहीं हो पाती है, उसे अयोध्या का नाम दिया गया है। उसी अयोध्या तीर्थ को भारत भूमि पर अवतरित किया गया, लगता है। आकाश में कणों के बीच निरन्तर चलने वाले संग्राम का अन्त तब होता है, जब देवताओं की तथा ऋषियों की प्रार्थना पर दया करके भगवान 'विष्णु', श्रीराम के रूप में अवतरित होते हैं और रावण का वध करते हैं। यह कार्य हर त्रेता युग के अन्त में घटित होता है। इस युद्ध का विज्ञानी 'बाल्मीकि' ऋषि ने समाधि अवस्था में दर्शन किया और उनका कवि हृदय भाव-विभोर हो उठा, तब प्रगट हुई 'रामायण'। रामायण के चार मानवीकृत प्रतीक शक्तियों - श्रीराम, लक्ष्मण, भरत एवम् शत्रुघ्न के अवतरण से आकाशीय दुष्ट रावण का संहार हुआ। इस कथा का उद्देश्य है, कि भक्तजन रामकथा का निरन्तर गान करते हुए कथा रूपी सेतु पर चढ़ कर संसार सागर से पार हो जायें। संस्कृत में रचित इसी 'रामायण' का युगानुकूल भाषा में काव्यात्मक वर्णन गोस्वामी तुलसीदास*

---

a *शिव पुराण (रुद्र संहिता), पृष्ठ 100, तेरहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0सं0 2057*

b *शिव पुराण (रुद्र संहिता), पृष्ठ 101, तेरहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0सं0 2057*

द्वारा 'रामचरितमानस' के रूप में लगभग चार सौ वर्ष पूर्व किया गया। रामचरितमानस अपने आप में अनेक उदात्त विचारों/आदर्शों से ओत-प्रोत सार्वकालिक 'धर्म-ग्रंथ' है, जो आज सम्पूर्ण मानवता की प्रेरणा स्रोत है।

पुराणों के अनुसार 'ब्रह्मलोक' में ऐसा कोई ऊर्जा केन्द्र भी है, जहाँ पर स्वर्ग के राजा के रूप में 'इन्द्र' देव (चञ्चल फोटॉन कण) अपनी पत्नी 'शची' (चञ्चल एन्टी फोटॉन कण) सहित विराजमान रहते हैं तथा देव शक्तियों का संचालन भी करते हैं। यह शक्ति केन्द्र निरन्तर राक्षसों से प्रताड़ित रहता है और दानव शक्तियाँ अर्थात् विनाशक शक्तियों से, सृजन की दैवी शक्तियों का निरन्तर संघर्ष चलता रहता है। क्योंकि हर कल्प में देवासुर संग्राम का रूप बदला हुआ है, अतएव *पुराणों में देवासुर संग्राम का बारम्बार वर्णन किया गया है। लगता है, कि यह संघर्ष सृष्टि के निर्माण के साथ-साथ ही आरम्भ हो जाता है। ठीक इसी आकाशीय क्रिया का अनुवाद पृथ्वी पर भी चलता रहता है। लगता है, कि पृथ्वी पर मानवता के खिलाफ आतंकवादी संघर्ष, आकाशीय संघर्ष की प्रतिध्वनि मात्र है और ऐसा प्रतीत होता है, कि जब तक आकाशीय दैवी शक्तियाँ विजय प्राप्त नहीं कर लेतीं, तब तक पृथ्वी पर मानवता भी प्रताड़ित होती रहेगी। कल्कि अवतार की कथा से ऐसा अनुमान लगता है, कि इस बार की विजय विज्ञान के प्रचार-प्रसार द्वारा होगी। ग्रंथों के अनुसार, इसी प्रकार दक्षिण दिशा में 'यमपुरी' का ऊर्जा केन्द्र स्थित है, जहाँ पर सभी जीवात्माओं को मृत्यु के पश्चात् किसी बड़ी शक्ति द्वारा खींच कर ले जाया जाता है और वहाँ पर उस जीवात्मा का, उसके कर्मों के आधार पर भाग्य निर्णय होता है। ये यमराज दक्षिण दिशा के लोकपाल माने गये हैं, शेष तीन लोकपाल अन्य तीन दिशाओं में भी हैं। इनके नाम हैं - इन्द्र, कुबेर और वरुण। 'इन्द्रपुरी' ब्रह्मलोक के पूर्व में, 'कुबेर पुरी' के ठीक विपरीत दिशा में है तथा 'यम' और 'वरुण' नामक दिक्पाल दक्षिण एवम् उत्तर दिशाओं के स्वामी हैं।*

विराट में स्थित लोकपाल

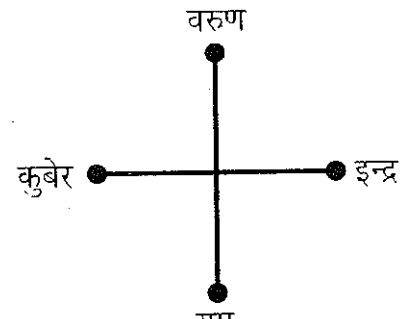

चित्र : 7.03

नटराज :- सम्पूर्ण ब्रह्मलोक में हमारे सूर्य समेत एक खरब से भी अधिक सूर्य हैं। ये सभी सूर्य अर्थात् एलेक्ट्रॉन तारे निरन्तर केन्द्रीय स्तम्भ की परिक्रमा करते हैं। विज्ञान के

अनुसार हमारे सूर्य की एक परिक्रमा 22½ करोड़ वर्ष में पूरी होती है। साथ में अनेकानेक कण भी हैं, जो निरन्तर नृत्य कर रहे हैं तथा गायन भी कर रहे हैं। अरबों आकाशगंगाओं सहित हमारी आकाशगंगा भी निरन्तर नृत्य कर रही है। इन सभी दृश्यों को एकीकृत करते हुए किसी कलाकार ने भगवान शंकर को **'नटराज'** के रूप में चित्रित किया है।

महारास :- यह नृत्य सिर्फ हमारी आकाशगंगा तक ही सीमित नहीं है, बल्कि अरबों आकाशगंगाएं निरन्तर किसी अज्ञात केन्द्र से आकृष्ट होकर, उसके चारों ओर चक्कर लगा रही हैं। उन आकाशगंगाओं में कितने सूर्य हैं, इसकी गणना करना असम्भव है। साथ में, अनन्त-अनन्त शक्तिकण (Energy Particles) भी नृत्य कर रहे हैं, गायन भी कर रहे हैं, मानो बाँसुरी बज रही हो। यह सब नृत्य और गायन उस अव्यक्त परमात्मा के लिए हो रहा है, जिसकी यह लीला है। वह निरन्तर सृजन करता है, उसके साथ खेलता है, फिर उसको नष्ट कर देता है। *ठीक ऐसे, जैसे कोई शिशु मिट्टी से पाँव का सहारा देकर एक घर बनाता है, उससे खेलता है, फिर उसे तोड़ देता है और इस क्रीड़ा को करते हुए प्रसन्न होता है। घर बनाना, फिर उसे तोड़ना, बस, प्रकृति में सर्वत्र यही लीला हो रही है। श्रेष्ठ विज्ञानी 'वेदव्यास' ने इस पूरे दृश्य का अपने ध्यानावस्था में दर्शन किया और इस अनुपम दृश्य का साक्षात्कार करके, उनके कवि हृदय ने श्रीहरिभक्त नारद की सलाह पर बालकृष्ण की बाल लीलाओं* [a] *का सृजन किया। अव्यक्त परमात्मा का श्रीमद्भागवत महापुराण के रूप में अवतरण हुआ, जो कृति इतनी सुन्दर बनी, कि जन-मानस ने इसे अपने हृदय में बिठा लिया और इसे पाँचवें वेद की संज्ञा तक दे दी। वह परमात्मा जिसने प्रकृति को तरह-तरह के फूलों से सजाया है, अति सुन्दर नर-नारियों को उत्पन्न किया है, वह स्वयम् भी कितना सुन्दर होगा, यह कल्पना से परे है। फिर भी उस भुवन सुन्दर कृष्ण कन्हैया का वेदव्यास ने कैसा सुन्दर चित्रांकन किया है - "तिरछी भौं, माथे पर काली लट, घुँघराले बाल, श्याम रंग, मोर मुकुटधारी, तिरछा चरण, बाँसुरी को बजाने वाला, वह तो कान्हा है, कनुआ है, माखन चोर है, चित्त चोर है," ऐसे-ऐसे सैंकड़ों नामों से माता यशोदा, गोपियों और भक्तों ने प्रेम से उसे पुकारा। वह जब बाँसुरी बजाता है, तो सारे गोप-गोपियाँ अपना-अपना घर छोड़ कर चाँदनी रात में बाँसुरी की धुन पर नृत्य करने वृन्दावन में पहुँच जाते हैं। उस नृत्य के माध्यम से ईश्वरीय आनन्द में डूबकर सभी सुध- बुध खो बैठते हैं। बस, यही वह 'महारास'* [b] *है, जो विश्वपटल पर विश्व नियन्ता निरन्तर कर रहा है।*

गोपियों का वस्त्र हरण :- भागवत पुराण में कथा आती है, कि गोपियाँ, यमुना नदी में निर्वस्त्र होकर स्नान कर रही थीं। बाल कृष्ण अपने सखाओं के साथ आए और उनके वस्त्र चुरा कर छिपा दिए और कदम्ब के वृक्ष पर बैठकर बाँसुरी बजाने लगे। गोपियों को जब अहसास

---

a *श्रीमद् भागवत महापुराण, प्रथम खण्ड, पृष्ठ 63-64, पन्द्रहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0सं0 2047*

b महारास का सम्भावित वैज्ञानिक चित्र एवम् प्रतीकात्मक चित्र पञ्चम सत्र में क्रमशः संख्या 5.05(a) तथा 5.05(b) पर हैं।

हुआ, तो वे घबरा कर कृष्ण से उनके वस्त्र लौटा देने की अनुनय-विनय करने लगीं। बाल कृष्ण ने उनकी विनय पर उनके वस्त्र लौटा दिए। बहुत से आलोचक भौतिक दृष्टि से देखने के कारण इस कथा को अश्लील समझते हैं।

प्रतीक कथा का अर्थ :- गोपियाँ वे जीवात्माएँ हैं, जो संसार के आनन्द का उपभोग तो करती हैं, परन्तु साथ में परमात्मा को भी याद करती रहती हैं, इसलिए वे संसार सागर के खारे पानी में स्नान करके व्याकुल नहीं होतीं, बल्कि यमुना के मीठे जल में स्नान करती हैं। यमुना सूर्य की पुत्री मानी गयी हैं तथा सूर्य ज्ञान के प्रतीक हैं, अतएव यमुना में स्नान करने वाली जीवात्माएं ज्ञानमय हैं। अब परमात्मा इन भक्त जीवात्माओं पर कृपा करने के लिए उनके वस्त्र चुरा लेता है अर्थात् उनका मानव शरीर समाप्त कर देता है, तो इस मृत्यु काल में जो जीवात्माएं परमात्मा से कातर भाव से अनुनय-विनय करती हैं, उन्हें परमात्मा ऐसे वस्त्र दे देता है, ***जिससे वे जन्म-मृत्यु के चक्र से छूट जाती हैं।*** ऐसा संदेश गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने दिया है, उसी के आधार पर इस रूपक कथा [a] की रचना की गयी लगती है।

राधा-कृष्ण के प्रेम प्रसंग की कथा :- कथा है, कि श्री राधारानी बाल कृष्ण को सभी गोपियों की अपेक्षा सबसे अधिक प्रिय हैं। राधारानी कृष्ण के चित्त की आह्लादिनी वृत्ति की मानवीकृत स्वरूप हैं, अतएव कृष्ण राधामय हैं तथा राधा कृष्णमय हैं। बाकी गोपियाँ जीवात्माएं हैं अर्थात् मन एवम् बुद्धि की वृत्तियाँ हैं। परमात्मा अपने सूक्ष्म शरीर से बहुत सारी जीवात्माओं का सृजन करता है, अतएव परमात्मा उनसे भी प्रेम करता है, परन्तु आह्लाद, जो प्रेम की चरम सीमा है, वह तो ***'राधारानी'*** ही है। कथा में भी प्रेम प्रसंग जो दिखलाया गया है, वह अश्लील नहीं है, क्योंकि तब श्रीकृष्ण की उम्र कुल ग्यारह वर्ष की ही थी। ***वह तो अलौकिक प्रेम है। यह प्रेम नित्य है, शाश्वत है।***

श्रीकृष्ण की आठ पटरानियाँ भी हैं। इन पटरानियों के नाम हैं - रुक्मिणी, जामवन्ती, सत्यभामा, कालिन्दी, सत्या, मित्रविन्दा, भद्रा तथा लक्ष्मणा। परन्तु भगवद् गीता में आठ अपरा प्रकृति के तत्त्वों के नाम - पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार [b] बतलाए गये हैं। आठों पटरानियाँ सम्भवतः आठ अपरा प्रकृति के तत्वों के प्रतीक हैं, जिनका सम्भावित क्रम निम्न प्रकार से है :-

---

a **अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्। यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः।।** *(गीता-8/5)*
अर्थ :- हे अर्जुन ! जो पुरुष अन्तकाल में मेरे को ही स्मरण करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूप को प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

b **भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च। अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।** *(गीता-7/4)*
अर्थ :- हे अर्जुन ! पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश तथा मन, बुद्धि और अहंकार भी ऐसे यह आठ प्रकार से विभक्त हुई मेरी अपरा (जड़) प्रकृति है।
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्। जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।। *(गीता-7/5)*
अर्थ :- सो यह आठ प्रकार के भेदों वाली तो अपरा है अर्थात् मेरी जड़ प्रकृति है और हे महाबाहो ! इससे दूसरी को मेरी जीवरूपा परा अर्थात् चेतन प्रकृति जान, कि जिससे यह सम्पूर्ण जगत् धारण किया जाता है।

	अपरा प्रकृति के तत्व		प्रतीक	श्रीमद् भागवत पुराण[a], द्वितीय खण्ड पृष्ठ संख्या
1.	बुद्धि	=	रुक्मिणी	467+474
2.	मन	=	जामवन्ती	483
3.	अहंकार	=	सत्यभामा	484
4.	आकाश	=	कालिन्दी	492-493
5.	वायु	=	मित्रविन्दा	493
6.	अग्नि	=	सत्या	494-495
7.	जल	=	भद्रा	496
8.	पृथ्वी	=	लक्ष्मणा	496

भगवान श्रीकृष्ण की सौलह हजार एक सौ और भी रानियाँ हैं, जिनके साथ उन्होंने ***'सोमासुर'*** को मारकर विवाह किया था। लगता है, कि छपाई की त्रुटि के कारण सोमासुर के स्थान पर भौमासुर छापा गया है और यह त्रुटि लगातार चलती चली आ रही है। प्रतीकों की रचना और उसके अर्थों पर चिन्तन एवम् मंथन के अभाव में यह त्रुटि आज तक बनी रह गयी। ***'सोम'*** का अर्थ है ***चन्द्रमा*** तथा ***'भौम'*** का अर्थ है ***मंगल।*** स्त्रियों का हरण करने की कथा चन्द्रमा के सिर पहले भी मढ़ी जा चुकी है, इसीलिए चन्द्रमा की सत्ताइस पत्नियाँ हैं। मंगल के खाते में पूर्वकाल में ऐसी कोई कथा नहीं है। अब चूँकि 'सोम' का अर्थ है चन्द्रमा तथा वह ब्रह्म के मन हैं, अतएव व्यक्ति जब एकान्त में होता है, तब उसका मन अनेक विचारों से भर उठता है। तरह-तरह की कल्पनाएं, जैसे सात्विक अथवा असात्विक विचारों से मन ओत-प्रोत हो उठता है। मन की यही आसुरी प्रवृत्ति का निग्रह करके वृत्तियों को वश में कर लेना ही श्रेष्ठ मानव जीवन का उद्देश्य है। भगवान श्रीकृष्ण ने उन आसुरी वृत्तियों को निग्रह करके मन पर पूरा अंकुश लगाया अर्थात् मन का निग्रह किया और अपने स्वरूप में स्थित हो गये। लगता है, कि महर्षि वेदव्यास ने मन में उठने वाली वृत्तियों की ठीक-ठीक गणना की थी, तब उन्होंने लिखा - सोलह हजार एक सौ। अमावस्या से लेकर पूर्णिमा तक सोलह दिनों में चन्द्रमा की सोलह कलाएं मानी गयी हैं। इन्हीं दिनों चन्द्रमा के प्रभाव से मन की वृत्तियाँ बदलती रहती हैं। यह गणित बहुत कुछ इस कारण भी सटीक लगता है, जैसे - आठ पटरानियों की बात, चौरासी लाख योनियों की गणित तथा साठ हजार राजा सगर के पुत्रों का उद्धार आदि। भारतीयों द्वारा ऐसी कई और भी गणनाएं की गयी हैं, जो शोध के विषय हैं।

लगता है 'रामायण' में श्रीराम जी ने भी दण्डक वन में चौदह हजार मन की वृत्तियों को वश में किया था, जिसे खर, दूषण एवम् त्रिसिरा समेत चौदह हजार राक्षसों के वध की संज्ञा दी गयी है। इसी कथा के प्रतिउत्तर में यह सोलह हजार एक सौ आठ विवाहों

---

a *श्रीमद् भागवत महापुराण, द्वितीय खण्ड, पन्द्रहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0सं0 2047*

की कथा [a] रची गयी लगती है। श्रीकृष्ण का जीवन चरित्र आकर्षणों एवम् माधुर्य से परिपूर्ण है, जबकि श्रीराम जी के जीवन में मर्यादा और आदर्श को प्राथमिकता दी गयी है।

सारी कथा का उद्देश्य है, कि सर्वसाधारण के कल्याण हेतु रसीली भगवत सम्बन्धी कथाओं द्वारा उनका सरलता से उद्धार किया जाये।

श्रीकृष्ण द्वारा कालिया नाग को नाथना :- नगरीय सभ्यता का विकास तथा जनसंख्या वृद्धि अनेक प्रकार के अभिशापों को जन्म देते हैं, उनमें से एक है नगर से मल का निष्कासन। मल निष्कासन का सबसे सरल उपाय है, उसे नदी में बहा देना। जितनी ज़नसंख्या अधिक होगी, मल तथा कूड़ा-कचरा भी उतना ही अधिक होगा तथा नदी में विषाक्तता तथा प्रदूषण भी बढ़ेगा। आज के युग में भी इस मल निष्कासन के कारण नदियों का जन दूषित हो रहा है। लगता है, कि ऐसा ही उस काल में वृन्दाबन में भी हुआ होगा। पशु पानी पी-पीकर मरने लगे थे। इस विषाक्तता को दूर करने हेतु श्रीकृष्ण गेंद ढूँढने के बहाने नदी में कूद गये तथा कालिया नाग को अपने चरणों के प्रहार द्वारा घायल कर दिया और नाग को ब्रज से दूर जाने की आज्ञा दी। कालियानाग विषाक्तता का प्रतीक है तथा उसको अन्यत्र जाने का आदेश देने का अर्थ है शोधित जल-मल को दूर कहीं खेतों आदि अथवा किसी समुचित स्थान पर विसर्जित करना।

श्रीकृष्ण द्वारा गोवर्धन पर्वत धारण करना :-ऐसा प्रतीत होता है, कि द्वापर युग में नगरीय सभ्यता एवम् बौद्धिकता का यथेष्ट विकास हुआ था, फिर भी जनसाधारण में यह विश्वास दृढ़ता से मान्य था, कि वर्षा के देवता ***'इन्द्र'*** की पूजा करने से ही वर्षा होगी, नहीं तो देवता रुष्ट हो जायेंगे तब वर्षा नहीं होगी और कृषि को बड़ी हानि होगी। अतएव सभी नागरिकों ने परम्परानुसार इन्द्र की पूजा की धूमधाम से तैयारी की और गोवर्धन पर्वत पर एकत्रित होकर पूजा करने हेतु उद्यत हो गये। श्रीकृष्ण, जो तब सात वर्ष के बालक ही थे, को यह अंधश्रद्धा उचित नहीं लगी और उन्होंने ब्रजवासियों को इन्द्र की पूजा करने से रोक दिया तथा कहा, कि सभी नागरिक गोवर्धन पर्वत की पूजा करें। लोग श्रीकृष्ण की बात मानते थे, अतएव गोवर्धन पर्वत की पूजा की जाने लगी तथा भगवान श्रीकृष्ण स्वयम् गोवर्धन देवता का भेष धारण करके सारा भोजन खाने लगे। इन्द्र को यह बात अच्छी नहीं लगी और ब्रजवासियों से बदला लेने हेतु घनघोर वर्षा द्वारा सारी ब्रजभूमि को जल से आप्लावित कर दिया। श्रीकृष्ण ने सभी नागरिकों की रक्षा का भार स्वयम् वहन करते हुए चमत्कारिक रूप से पर्वत को छोटी उँगली पर उठा लिया और ब्रजवासियों को पर्वत की छाया में शरण लेने की सलाह दी। सात दिन तक वर्षा करके इन्द्र देव थक गये। इन्द्र का गर्व चूर हो गया और वर्षा बन्द हो गयी।

श्रीकृष्ण ने नागरिकों को समझाया, कि पर्वत जितना ऊँचा होता है और वह जितना हरे-भरे वृक्षों से भरा होता है, उतनी ही घनघोर वर्षा होती है, इन्द्र की पूजा से वर्षा नहीं

---

a *श्रीमद् भागवत महापुराण, द्वितीय खण्ड, पृष्ठ 497-503, पन्द्रहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0सं0 2047*

होती। पर्वत को ऊपर उठाना तो ऊँचाई का प्रतीक है जैसे हिमालय तथा दक्षिण भारत के तटीय पठारों की ऊँचाई एवम् उस पर स्थित घने वृक्षों के कारण अरबसागर और हिन्दमहासागरीय मेघ पहाड़ों के पार नहीं जा पाते और पहाड़ों समेत पूरे मैदानी भूभाग पर घनघोर वर्षा करते हैं।

राजतिलक के बाद श्रीराम द्वारा श्री सीता जी का त्याग करना (बाल्मीकि रामायण से) :- श्रीराम ने अपने पूरे जीवन में कठोर मर्यादाओं का पालन किया। माता-पिता की आज्ञा मानकर, चौदह वर्ष के लिए वन में अपार कष्ट सहे। फिर राजा बनकर भी सीता का त्याग करना, लोक रंजन के लिए था, न कि सीता पर अत्याचार के लिए। सीता के घर छोड़ने के पश्चात् श्रीराम ने दुबारा ब्याह नहीं रचाया और उन्होंने महलों में रहते हुए भी सीता के वियोग में पूरा जीवन वनवासी जीवन जिया, राजा की भाँति विलासी जीवन से पूरी तरह से वे दूर रहे। वे लोक रंजन की चुभन को कर्त्तव्य समझ कर पुत्र की भाँति प्रजापालक राम बन कर जिए। अपना घर, परिवार, पत्नी व स्वयम् को, देश, समाज व राष्ट्र की वेदी पर अर्पण कर दिया और हम सब के लिए श्रेष्ठ मर्यादा स्थापित कर गये।

श्रीरामचरितमानस से :-

चौ0 :- ***ढोल गवाँर शूद्र पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी[a]।।***

उपरोक्त चौपाई पर समाज का अधिकांश वर्ग बहुत क्षुभित लगता है, विशेषकर तथाकथित शूद्र एवम् स्त्री वर्ग।

स्पष्टीकरण :- ढोल तो जड़ पदार्थ है, वह तो पीटने से ही बजेगा, परन्तु ताड़ना शब्द गवाँर-शूद्र और पशुवत व्यवहार करने वाली नारी के लिए प्रयोग किया गया है। जो शूद्र शिक्षित नहीं है, अपराधिक प्रवृत्ति का है, उसे बिना भय (ताड़ना) के काबू नहीं किया जा सकता है।

नारी का प्रकृति प्रदत्त कर्त्तव्य है श्रेष्ठ संतान को उत्पन्न करना, परन्तु जो नारी स्वच्छन्द व्यवहार करती है, अनेक पुरुषों से सम्पर्क रखती है, उसकी संतान भी सामान्यतया स्वच्छन्द, अपराधिक प्रवृत्ति वाली, हिंसक एवम् दुष्ट प्रवृत्ति की ही होनी स्वाभाविक है। ऐसी संतान समाज के लिए बोझ साबित होती है। स्त्रियों की कोई मर्यादा न रहने तथा वैवाहिक मर्यादा को भंग करने के कारण विदेशों में अपराध का ग्राफ दिन-प्रतिदिन ऊँचा होता जा रहा है, इसीलिए नारी का मर्यादा के भीतर रहना अत्यावश्यक है। इस चौपाई का यही आशय है। भारतीय ग्रंथों में कहा गया है, कि नारी रामभक्त, शूरवीर, विद्वान अथवा समाज एवम् राष्ट्र सेवी उत्तम संतान उत्पन्न करे अन्यथा बाँझ ही रहे तो ही श्रेष्ठ है।

---

a *श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. 58-59 के मध्य*

b Hindus were able to develop evolutionary cosmologies which come very close to our modern scientific models. One of these cosmologies is based on the Hindu Myth of **Lila-The Divine Play**-in which Brahman transforms himself into the world. Lila is a rhythmic play which goes on in endless cycles, the One becoming the many and the many returning into the One.
Page-219-220, Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo

सारांश :- परमात्मा ने अनन्त नाम व रूपों से परिपूर्ण इस अद्‌भुत मायावी संसार की रचना करके जीवों को क्षणिक सुख के भुलावे में डाल रखा है और इस खेल [b] से वह आनन्द लेता है। इस माया को काटने हेतु भारतीय चिन्तकों ने उसी लीलाधारी का अनुगमन करते हुए उस परमात्मा के अनेक नामों का सृजन किया। उसके सुन्दर रूपों की कल्पना की और चित्रांकन भी किया। उन्हीं नामों और रूपों के सहारे मानव मन को सांसारिक सुखों से ईश्वरीय आनन्द की ओर मोड़ देने की प्रक्रिया खोज निकाली तथा उस परमात्मा का साक्षात्कार करके जीव को संसार सागर से पार उतरने का सर्वसुलभ मार्ग का विधान भी बनाया [a]। ***मानव सभ्यता के विकास की यह सर्वोत्कृष्ट सीमा है। हम सभी को इस ज्ञान का सदुपयोग करना कर्त्तव्य है !***

हरिः ॐ तत् सत् !

---

a *'ईश्वर साक्षात्कार'* की वैज्ञानिक प्रक्रिया का विवरण **चतुर्थ सत्र** के अनुच्छेद 2(i) में "अव्यक्त से व्यक्त बनाने की वैज्ञानिक विधि" शीर्षक के अन्तर्गत दी गयी है।